International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232; Impact Factor: RJIF 5.22
Received: 24-12-2020; Accepted: 12-01-2021; Published: 12-02-2021
www.hindijournal.com
Volume 7; Issue 1; 2021; Page No. 56-57

समाजिक परिप्रेक्ष्य में–मानस प्रयोजन

डॉ. ऊषा तिवारी
शासकीय महाविद्यालय घोड़ाडोगरी, बैतूल, मध्य प्रदेश, भारत।

सारांश
मेरे प्रस्तुत शोध–पत्र का उद्देश्य वर्तमान सामाजिक परिप्रेक्ष्य में रामचरित मानस का समाज में मूल्य एवं प्रयोजन को सामाजिक धरातल पर व्यक्त करना है। क्योंकि समाज में जो भ्रष्टाचार एवं अमानुषि प्रवत्ति का चलन बड़े जोरों से चल रहा है। उसके लिए हिन्दी जगत में मानस ही एक ऐसा पड़ाव है जिसकी छत्रछाया से बहुत सी त्रुटियों को समाज से महज काँटे की तरह निकालकर फेंका जा सकता है। राम एक ऐसे अवतार के रूप में पृथ्वी में आए जो समाज की प्रत्येक गतिविधि में चारित्रक रूप से प्रेरणास्वरूप आदर्शवादी व्यक्तित्व की अतुलनीय धरोहर बनकर सर्वोपरि स्थान ग्रहण किया है। उन्होंने मानव मस्तिष्क को नित्य पारिवारिक घटनाओं तथा संघर्षशील जीवन जीने का समाज में एक अटल उद्देश्य स्थापित किया है।

मूल शब्द: श्रीराम–रामचरित मानस–सामाजिकता के परिपेक्ष्य में, प्रयोजन, मानस का दायित्व।

प्रस्तावना

दो अक्षरों से सम्पृक्त शब्द 'राम' अनादिकाल से लोकमानस को प्रभावित करता आया है, जो कि विलक्षण, अद्भुत तथा विस्मयकारी भी है। भी है। जिसकी सत्ता और महत्ता दो अक्षरों 'राम' में ही रही, उसे समझ और समझा पाना सुगम नहीं, जितना वह दिखता है। अक्षरों की आकृति में तो वह लक्षित है; परन्तु सार्वत्रिक व्याप्ति में वह दृष्टि से परे है। योगिजन ने इस शब्द को केन्द्रबिन्दु बनाकर जहाँ योगसाधना की थी, वहीं भक्तवृन्द ने नाना रूपों में राम के साथ तादात्म्य स्थापित करने का असफल प्रयास किया है। वास्तव में तुलसीदास के दृष्टिकोण में भक्ति–भाव प्रधान रूप से होते हुए भी उनकी भावना सामाजिक है। देश और समाज की रीति, नीति और संस्कृति का रूप में उन्होंने हमारे सामने प्रस्तुत किया है, उससे उनके सामाजिक और राजनीतिक आदर्श प्रतिबिम्बित होते हैं। वे समाज को जिस रूप में देखना चाहते थे, वह रामराज्य का रूप है, जिसमें राजा के कर्त्तव्य के साथ जन–समूह और प्रजा की कर्तव्य परायणता की अनिवार्यता भी उपलब्ध है। तुलसीदास ने मानव जीवन की पूर्ण कल्पना की जो न की कबीर कर सके, न सूर और न कालीदास और न भवभूति ही। जिस जीवन कल्पना को महाकवि वाल्मीकि ने उद्घाटित किया था। उसका ही परिष्कार करके और समाज के अनुरूप बनाकर तुलसी ने राम के चरित्र के रूप में हमारे सामने प्रस्तुत किया। रामकथा वैश्विक जीवन मूल्यों में समन्वित ऐसी पवित्र मंदाकिनी है। जिसके अमृत–बिन्दु मानव मात्र को अद्वितीय रामचरित मानस ऐसी कथा है जो हमारी क्रियाओं में रात–दिन व्यवहृत होती है यह कथा समाज की विभिन्न क्रियाओं में नित नवीन अर्थ के समान सामाजिक परिवेश में प्रत्येक व्यक्ति के काम आती है। दरअसल लौकिक सुखों से लोकोत्तर सुख, शारीरिक सुख से चैतसिक सुख, स्वार्थ त्याग अपेक्षाओं का अभाव एवं ईर्ष्या का परित्याग आदि कि उत्तुंग शीतल लहर का स्पर्श किसी भी संवेदनाशील मानव को वसुधा का रत्न बना देता है। सामाजिक रूप से रामकथा पूर्णरूपेण विशाल हृदयता और मानसिक अनुदारता की भावना को दर्शाता है। वर्तमान में समाज के लिए मानसकार ने यह संदेश दिया है –

''बयरू न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई।।''[1]

रामकथा में सामाजिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक तथा नैतिक–मूल्यों का विविधता से चित्रण हुआ है। रामकथा की शीतल छाँव में प्रेम मानव की मूल प्रकृति में निहित हो जाता है। रामकथा सामाजिक एवं व्यवहारिक रूप से कृपाशील एवं दयालुता की अनुपम छवि को प्रस्तुत करता प्रतीत होती है।

''मृषा होउ मम श्राप कृपाला। मम इच्छा कह दीनदयाला।।
मैं दुर्बचन कहे बहुतेरे। कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे।।''[2]

आज के मानव समाज में जिन विसंगतियों और विडम्बनाओं का प्रकोप को समाज झेल रहा है उनसे निजात पाने के लिए तुलसी का रामचरित मानस विशेष रूप से प्रासंगिक है क्योंकि समाज अनेग वर्गों एवं वर्णों में विभाजित है। मानव, मानव के बीच विषमता भावनात्मक रूप से पूरी तरह से बिखर चुकी है। एक–दूसरे के प्रति घृणा समूचे विश्व में परिलक्षित होती है।
तुलसी ने इस विषम परिस्थिति से निकलने का जो परम प्रकाश भारतीय संस्कृति को दिया जो सम्पूर्ण भारतवर्ष की संरक्षक बनी जो सिर्फ भारतवर्ष में ही नहीं सम्पूर्ण विश्व में भारतीय संस्कृति की विजय पताका बनकर देश–विदेश में प्रेम और सौहाद्र की भावना को स्फुरित कर रही है।

''जड़ चेतन गुन दोष मैं विश्व कीन्ह करतार ।
संत, हंस गुन गहहि पै परिहरि वारि विकार।।''[3]

सयमित जीवन, संतुलित जीवन, त्यागमय आचरण जड़चेतन की सेवा वचनबद्धता जीवन मात्र में सम्यक दृष्टि तथा धर्ममय जीवन जीने का आदर्श सम्पूर्ण ब्रह्मण्ड में सिवाय रामचरित मानस के और किसी भी ग्रंथ में दृष्टित नहीं होता है। यद्यपि सामाजिक युग की अवधारणा तथापि वास्तविक रूप में वही न्याय राम राज्य में भली–भांति सभी व्यक्तियों, समूहों, वर्गों एवं सम्पूर्ण जाति के लिये होता था। रामचरित मानस में आज हमारे वर्तमान की अनुशासनहीन उच्छृंखल युवा पीढ़ी गुरुजनों का अनादर करते शिष्य विवाह का माखौल उड़ाते दम्पत्ति और सर्वत्र फैले घोर स्वार्थ की परंपरा से समाज को निजात देने का कार्य करती है। क्योंकि आज व्यक्ति परिवार, समाज व विश्व जीवन के प्रत्येक स्तर पर तुलसीदास ने धर्मधुरंधर मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम के

चरित्र के द्वारा जीवनादर्शों की व्यावहारिक प्रतिष्ठा अनयत्र दुर्लभ है। भारतीय समाज अनेकता में एकता का मंत्र जपता आया है। किन्तु आज एक बार फिर भारत कभी धर्म, कभी जाति, कभी भाषा, कभी क्षेत्रियता, कभी राजनीति के नाम पर अलग–अलग खानों में बंटता आया है। रामचरित मानस उस अनंत ज्योति के समान हमारे जीवन में प्रकाश फैलाने का कार्य करती है।

''राम नाम मनिदीप धरु, जीह देहरीं द्वार।
तुलसी भीतर बाहेरहुँ जौं चाहसि उजियार।।''[4]

बाल्यकाल से राज्याअभिषेक तक जितनी विविध परिस्थितियों में राम का जीवन विकसित हुआ वे केवल जीवन की विविधता ही प्रस्तुत नहीं करती बल्कि हृदय को मंथन करने वाली गंभीरता और विषमता भी प्रदान करती है हम रामचरित मानस को केवल साहित्यिक रचना के ही रूप में देखते आये हैं किन्तु अनेक स्थानों पर रामचरित मानस का एक–एक दृश्य सामाजिक जीवन की प्रत्येक परिस्थिति से जुड़ा हुआ प्रतीत होता है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में भौतिकवाद ने राष्ट्रभक्ति एवं आस्था को मानवीय रूप से परिस्थितियों के साथ आत्मसत्य एवं आत्मसौन्दर्य की अभिन्न पहचान की तरह स्थापित किया है। हम सभी मानते है कि नैतिकता मनुष्य के सम्यक जीवन के लिए कितना आवश्यक है, क्योंकि इसके अभाव में मानव का सामूहिक जीवन कठिन हो जाता है। नैतिक मूल्य ही व्यक्ति को मानव होने की ऋणी प्रदान करते हैं, इसके आधार पर ही मनुष्य सामाजिक जानवर से उपर उठकर नैतिक अथवा मानवीय प्राणी कहलाता है, ये मूल्य ही भारतीय ग्रंथों से गतिशीलता मिलती रही, जब–जब कठिन समय आया, तो कोई न कोई आया जिसने इस गतिशीलता को बढ़ाया। मेरा यह मानना है कि जब वाल्मीकि जी ने रामायण लिखी तोउससमय यह एक विशिष्ट वर्ग तक पहुँची होगी। आज के सन्दर्भ में मैं कह सकती हूँ कि बचपन से लेकर आज तक हर सन्दर्भ में, रामकाव्य का कोई न कोई अंश हर जगह सन्दर्भित हो जाता था, जिसका प्रभाव तो पड़ता है और पड़ा है, जिस पर चर्चा होगी।

''पाप करत निसि बासर जाहीं। नहिं पट कटि नहिं पट कटि नहिंपेट अघाहीं।।
सपनेहुँ धरमबुद्धि कस काऊ। यह रघुनंदन दरस प्रभाऊ।।''[5]

'मानस' में निहित रामकथा मानव संस्कृति का आधार है। रामकथा में आदर्शमय सौन्दर्य है। 'मर्यादा' श्रीराम की कथा का केन्द्रीय भाव है। श्रीराम का मर्यादित रूप भारतीय जनमानस को सदैव प्रभावित करता रहा है। रामकथा में समग्र भारतीय जीवन की परम्परा, संस्कृति, पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता तो है ही, मानव मात्र व मानव संस्कृति की शाश्वतता भी रामकथा में है। यह दोषों, दरिद्रताओं को कलियुग के समस्त पापों को नष्ट करने वाली है–

''भरत राम संबादु सुनि सकल सुमंगल मूल।
सुर स्वारथी सरहि कुल बरषत सुरतगुरू फूल।।''[6]

तुलसी साहित्य जीवन–मूल्यों का भंडार है। तुलसीकृत समस्त काव्य कृतियों में वैश्विक जीवन–मूल्य किसी न किसी रूप में दृष्टिगत अवश्य होते हैं। इनकी समस्त कृतियों में रामचरितमानस जीवन मूल्यों का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इस जीवन मूल्यों तथा समन्वयवाद को पात्रों के माध्यम से प्रस्तुत करता हैं गोस्वामी तुलसीदास के साहित्य में जीवन मूल्यों के साथ–साथ समन्वय की विराट चेष्टा के भी दर्शन होते हैं। तुलसी के समय देष में विविध सम्प्रदायों, मिथ्याचारों तथा पाखण्डों का प्रचलन था। विभिन्न धर्मों के लोगों में अनेक बाह्यडम्बर प्रचलित थे। परिवारों में समन्वय नहीं था। किसान को उसकी फसल तक देखने को नहीं मिलती थी, जमींदारों का साम्राज्य था। जनता को शासक तथा राजा–महाराजा गुमराह कर रहे थे।

तत्कालीन जनता के सामने कोई महान आदर्श नहीं था। ऐसी विषम परिस्थियों में किसी ऐसे महान व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो देश की गुमराह जनता का उचित मार्गदर्शन कर उनमें समन्वय स्थापित कर एक नई दिशा बता सके। ऐसी विषम परिस्थियों में महाकवि तुलसीदास ने अपने साहित्य के माध्यम से तत्कालीन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में मानस–प्रयोजन में समन्वय का कार्य किया।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के मतानुसार ''भारत वर्ष का लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय करने का अपार धैर्य लेकर आया हो। भारतीय जनता में नाना प्रकार की परम्परा विरोधिनी संस्कृतियाँ, साधनाएँ, जातियाँ, आचार–विचार और पद्धतियाँ प्रचलित थीं। तुलसीदास स्वयं नाना प्रकार के सामाजिक स्तरों में रह चुके थे उनका सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है।''[7]

अतः तुलसी ने भारतीय जनता में समन्वय स्थापित कर उन्हें सही मार्गदर्शन दिखाया। डॉ. रामसजन पांडेय भी लिखते हैं, ''तुलसी के काव्य में समन्वय की विराट् चेष्टा हुई है। यह समन्वय अनेक स्तरों पर दिखाई पड़ता है। तुलसी ने द्वैत–अद्वैत, निर्गुण–सगुण शैव–शाक्त, बाह्मण–शूद्र, साधूमत–वेदमत और लोकमत में, राजा–प्रजा में, संवेदना–शिल्प में समन्वय करके रामभक्ति काव्य में समन्वयवाद को प्रतिष्ठित किया है।''[8]

तुलसी के समय जाति–पांति एवं छुआछूत का भेदभाव अत्यधिक बढ़ा–चढ़ा था। उच्च वर्ण के व्यक्ति निम्न वर्ण के लोगों से घृणा करते थे। तुलसी ने इस सामाजिक विषमता को दूर करने हेतु भगवान श्रीराम द्वारा भीलनी शबरी के जूठे बेर खाने का प्रसंग तथा गुरू वशिष्ठ को शूद्र में समन्वय स्थापित किया।[6]

संदर्भ ग्रंथ

1. तुलसी सौरभ, सौरभवर्ष 4 अंक 6 फरवरी, मार्च 2011 जयपुर
2. रामचरित मानस, बालकाण्ड पृष्ठ 123
3. वही, पृ. 9
4. रामचरित मानस बालकाण्ड पृष्ठ 9
5. रामचरित मानस अयोध्याकाण्ड पृष्ठ 505
6. 6.वही पृष्ठ 551
7. अचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, 1952
8. तुलसी साहित्य के सर्वोत्तम अंश, डॉ. रामप्रसाद मिश्र